

हिन्दुस्तान

शीर्ष पर सुहाग

लेफ्टिनेंट जनरल दलबीर सिंह सुहाग के थल सेना प्रमुख नियुक्त हो जाने के बाद इस मामले में विवाद खत्म हो जाना चाहिए। हमें यह उम्मीद करनी चाहिए कि अगली केंद्र सरकार जिसकी भी हो, वह थल सेनाध्यक्ष के पद को विवाद में नहीं घसीटेगी। मनमोहन सिंह सरकार थल सेनाध्यक्ष की नियुक्ति पहले ही करना चाहती थी, लेकिन इस बात को लेकर विवाद हो गया कि क्या एक जाती हुई सरकार को नियुक्ति करनी चाहिए या यह काम अगली सरकार पर छोड़ देना चाहिए। रक्षा मंत्रालय ने यह मामला चुनाव आयोग की मंजूरी के लिए भेज दिया था। चुनाव आयोग ने रक्षा मंत्रालय के नियुक्ति के अधिकार को स्वीकृत किया। चुनाव आयोग का कहना है कि रक्षा मामलों से जुड़े फैसले करने में आचार संहिता आड़े नहीं आती। इसके बाद जनरल सुहाग की नियुक्ति की राह खुल गई। थल सेनाध्यक्ष की नियुक्ति को लेकर सिर्फ आचार संहिता का विवाद नहीं था, इसमें कुछ अन्य विवाद और कानूनी मसले भी खड़े किए गए थे, लेकिन सरकार ने वरिष्ठता के पारंपरिक प्रतिमान को मानते हुए जनरल सुहाग को थल सेनाध्यक्ष बनाने का फैसला किया।

वरिष्ठता को सामान्यतः थल सेनाध्यक्ष बनाने के लिए योग्यता माना जाता है और जनरल सुहाग फिलहाल उप थल सेनाध्यक्ष हैं, इसलिए इस बात पर विवाद नहीं होना था। भारतीय जनता पार्टी ने इस बात को मुद्दा बनाया कि एक जाती हुई सरकार क्यों महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियां कर रही है। कुछ मामलों में भाजपा के ऐतराज जायज थे, जैसे लोकपाल की नियुक्ति के मसले पर। आखिरकार सरकार ने वह मसला अगली सरकार पर छोड़ भी दिया। इस सरकार ने कुछ और भी नियुक्तियां की हैं, जिन पर सवाल उठाए जा सकते हैं या अगर अगली सरकार रायग की बनी, तो वे रद्द भी हो सकती हैं, लेकिन यह बात थल सेनाध्यक्ष के बारे में जायज नहीं है। सेना प्रमुखों की नियुक्ति अमूमन तीन महीने पहले की जाती है और वर्तमान थल सेनाध्यक्ष जनरल बिक्रम सिंह 31 जुलाई को रिटायर हो रहे हैं। इसके पहले भी ऐसा हो चुका है कि किसी जाती हुई सरकार ने सेना प्रमुख की नियुक्ति की, लेकिन उस पर कोई विवाद नहीं हुआ। भाजपा अगर इसे राजनीति का मुद्दा बनाती है, तो चाहे-अनचाहे उस पर सेना को राजनीति में घसीटने का आरोप लगेगा, क्योंकि इस मामले में अब पूर्व सेनाध्यक्ष जनरल वी के सिंह का नाम भी आएगा। जब जनरल वी के सिंह थल सेनाध्यक्ष थे, तब उन्होंने किसी मामले में जनरल सुहाग को दोषी मानते हुए उनकी तरक्की पर रोक लगा दी थी। जनरल बिक्रम सिंह ने नेतृत्व की कमान संभालने के तुरंत बाद यह रोक हटा दी। बाद में जांच में दो जूनियर अधिकारियों को उस मामले में दोषी पाया गया, जिसमें जनरल सुहाग की तरक्की रोक दी गई थी। जनरल सिंह के एक करीबी रिश्तेदार लेफ्टिनेंट जनरल अशोक सिंह भी थल सेनाध्यक्ष के पद के दावेदार थे, इसलिए इस मामले पर विवाद बेवजह राजनीतिक उलझनें पैदा करेगा, भले ही लोगों की मंशा ऐसी न हो।

इस विवाद से अब किसी सेना प्रमुख की नियुक्ति को उस मामले में दोषी पाया गया, जिसमें जनरल सुहाग की तरक्की रोक दी गई थी। जनरल सिंह के एक करीबी रिश्तेदार लेफ्टिनेंट जनरल अशोक सिंह भी थल सेनाध्यक्ष के पद के दावेदार थे, इसलिए इस मामले पर विवाद बेवजह राजनीतिक उलझनें पैदा करेगा, भले ही लोगों की मंशा ऐसी न हो। इस विवाद से अब किसी सेना प्रमुख की नियुक्ति के बारे में कानूनी और सांविधानिक स्थिति स्पष्ट हो गई है और शायद भविष्य में ऐसा विवाद न हो। सेना के मामलों में यथासंभव निर्वाह फैसले करने की परंपरा रही है और अगर प्रचलित नियमों और स्थापित परंपराओं के मुताबिक कोई काम किया जाता है, तो उस पर आपत्ति की कोई वजह नहीं है। नए सेनाध्यक्ष के सामने कई चुनौतियां होंगी, जिनमें सैन्य आधुनिकीकरण और रक्षा सामग्री की कमी को दूर करना शामिल हैं। उम्मीद करनी चाहिए कि नई सरकार और सेना परस्पर सहयोग बनाए रखकर देश की रक्षा को कमजोर नहीं होने देंगी।

विदेशी अखबार से

दक्षिण चीन सागर में चीन

एक अरब डॉलर का ऑयल रिग (समुद्र तल से तेल निकालने वाला जहाज) लेकर चीन दक्षिण चीन सागर में उतर चुका है। यह जहाज फुटबॉल के मैदान जितना बड़ा है। इसी के दम पर चीन अपनी महत्वाकांक्षी परियोजना की शुरुआत करने जा रहा है। एक तरह से उसने अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की एशिया में ‘पुनर्संतुलन की नीति’ को चुनौती दी है। कुछ हफ्ते पहले बराक ओबामा ने इस क्षेत्र का दौरा किया था। यह रिग वियतनाम के तट से करीब 130 मील की दूरी पर है। अंतरराष्ट्रीय कानूनों के तहत वियतनाम इस पर विशेष आर्थिक क्षेत्र का दावा करता है। इसके बरक्स चीन का दावा कमजोर है, लेकिन उसने 80 जहाजों के बेड़े के साथ धावा बोला और वियतनामी जहाजों पर पानी की बौछारें कीं। चीन का यह कदम साफ संकेत देता है कि उसने भड़काऊ कार्रवाई की है। शी जिन्पिंग की सत्ता दक्षिण चीन सागर पर अपना आधिपत्य चाहती है। उसे पांच अन्य देशों के दावों को कटई परवाह नहीं है। उसे इस बात की भी चिंता नहीं कि बराक ओबामा ने उनमें से दो देशों के साथ रक्षा समझौते की प्रतिबद्धता दोहराई है। इस हिसाब से देखें, तो चीन का तज्जा कदम उस अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को चुनौती है, जिसे शीत युद्ध के बाद से अमेरिका ने बनाए रखा था। चीन के इस कदम को एक दुस्साहस के तौर पर देखा जा सकता है, लेकिन कथन की साथ बातचीत करता रहा। वह दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों के संपर्क में रहा, ताकि उसके अनुरूप सागर में एक आचार संहिता लागू हो। कुछ महीने पहले उसने वियतनाम के साथ तेल व गैस खनन की संभावना तलाशी थी। लेकिन तज्जा कदम बताता है कि जब चीन को लगा कि उसे पड़ोसी देशों या अमेरिका से कोई रास्ता नहीं मिल रहा, तो उसने आक्रामक नीति अपना ली है।

द वाशिंगटन पोस्ट , अमेरिका

75 साल पहले

हिन्दुस्तान

आयुर्वेद और यूनानी का विरोध

बम्बई के प्रसिद्ध हैफकिन इंस्टीट्यूट के डाइरेक्टर कर्नल एस.एस. सोखे ने मंगलवार को एक ऐसी आपत्तिपूर्ण बात कही है जिसे हम दरगुजर नहीं कर सकते। आपका कहना है कि आयुर्वेदिक और यूनानी चिकित्सा-पद्धतियां किसी समय अच्छी रही हों, पर अब पिछड़ गई हैं, उनमें कई दवाइयां काफी मूल्यवान हैं, पर इन चिकित्सा पद्धतियों का आधार कपोल-कल्पित और दोषपूर्ण है, क्योंकि उन दिनों विज्ञान में इतनी प्रगति नहीं हुई थी। इसलिए अतीत पर लौटने का प्रयत्न जो बहुमूल्य ज्ञान हमने प्राप्त किया है उससे इनकार करना ही नहीं होगा, बल्कि उस ज्ञान की वृद्धि का रास्ता भी अवरुद्ध करना होगा। कर्नल सोखे विद्वान हैं, इसलिए उनके कथन को चुनौती देना हमारे लिए संभव नहीं है, लेकिन हम उनसे यह निवेदन करेंगे कि अगर परिचमीकरण का चरमा उतार दिया जाए तो शायद यह देखना असंभव न होगा कि विज्ञान की उन्नति का उपयोग जैसा एलोपैथिक चिकित्सा-पद्धति में किया जा सकता है वैसा ही आयुर्वेदिक और यूनानी चिकित्सा पद्धतियों में भी संभव है। हमारा खयाल है, कम से कम हिन्दुस्तान में तो यही दोनों चिकित्सा पद्धतियां ज़्यादा कारगर साबित होंगी- और कारगर हो सकती हैं, यह इस ओर ध्यान न दिए जाने पर भी इनके चमत्कारों से स्पष्ट है।

14 मई, 1939 को प्रकाशित सामयिक-चर्चा के अंग

कुछ नहीं कहता ज़्यादा मतदान

मतदान के प्रतिशत से नतीजे निकालने का न कोई पक्का सिद्धांत है और न ही पिछले अनुभव किसी रुझान की पुष्टि करते हैं।

कई दशकों से मतदान पर चलने वाली बहस में यही कहा जाता है कि मतदान का प्रतिशत ज़्यादा होने का अर्थ है बदलाव और कम होने का अर्थ है पिछली सरकार पर ही मुहर। (दुखद यह है कि बुनियादी तथ्यों की जांच किए बगैर विशेषज्ञों, राजनीतिक टीकाकारों, पत्रकारों और यहां तक कि राजनेताओं ने भी इसी को सबसे बड़ा सच मान लिया है। बीते 25 वर्षों में हुए आम चुनावों और विभिन्न राज्यों के विधानसभा चुनावों के नतीजे व मतदान प्रतिशत के रुझान को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इस समझ को खारिज करने के पर्याप्त कारण हैं। दरअसल, पुरानी



उमाशंकर शुक्ल

नशतर

बसंती की मौसी की दिक्कत

कमी-कमी आज का सच कल की कहानी के नाए दर्जन सा लगता है।

डिस्क्लेमर- इस व्यंग्य-लेख को पढ़कर अरविंद केजरीवाल समेत तमाम नेता याद आएँ, तो इसकी ज़िम्मेदारी हमारे लोकतंत्र की है।
शोले फिल्म के उस सीन को याद करें, जिसमें अमिताभ बच्चन अपने शराबी दोस्त और बसंती के रिश्ते की बात करने मौसी के पास जाते हैं। अमिताभ बच्चन- मौसी वीरू शराबी है, उससे बसंती की शादी मत करना।
बसंती की मौसी- अच्छ, पड़ोस के गांव का गोपाल कैसा रहेगा ?
अमिताभ बच्चन- न मौसी, सोचना भी मत, गोपाल तो कक्षा छह में सिगरेट पीता हुआ पकड़ा गया था, ऐसे ऐबी लड़के को अपनी बेटी दोगी ?
बसंती की मौसी- अच्छ, फिर रामगढ़ का

वह हरचरना कैसा है ?

अमिताभ - न मौसी, वह तो कल ही बिना टिकट रेल से यात्रा करते धरा गया है।

मौसी- तेरे पास तो हेरक लड़के की जन्म-पत्री है। ? तू करता क्या है ?

अमिताभ- मौसी, मेग तो एक ही काम है कि मैं हर लड़की वाले घर में जाकर यही बताता हूं कि किस-किस लड़के से शादी नहीं करनी है। अभी दिल्ली, अभी बनारस, अभी कहीं और...। मैं खुद कुछ नहीं करता हूं। सबको जाकर बताने में बहुत वक्त लगता है। सबकी बदमाशी की रीपोर्ट निकालने में इतना टाइम और एनर्जी खर्च हो लेती है कि कुछ हो ही नहीं पाता है।

मौसी- सारे लड़के बदमाश हैं। तो मैं शादी किससे कराऊं बसंती की, साफ-साफ बता न।
अमिताभ- मौसी, वैसे में भी हूं आपके सामने, मतलब मुझे भी देख लेतीं।

साइबर संसार

काहे का भद्रलोक

यह सचमुच चौंकाने वाली बात लग सकती है कि ब्रिटेन में भी महिलाएं अपने घरों में खराब बर्ताव का शिकार होती हैं। आंकड़ों की बात करें, तो पिछले साल यानी 2013 में दस लाख से भी ज़्यादा महिलाओं के साथ उनके ही घरों में खराब बर्ताव किया गया। दूसरे शब्दों में कहें, तो इन महिलाओं को अपने ही संबंधियों के हाथों गाली-गलौज, मारपीट या बुरे व्यवहार का सामना करना पड़ा। हालात इतने गंभीर हुए कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा के मामलों पर संयुक्त राष्ट्र की विशेष दूत रशीदा मंजू को हालात का जायजा लेने के लिए ब्रिटेन का खास दौरा करना पड़ा। ब्रिटेन में महिलाओं के हितों के लिए काम करने वाले संगठनों ने रशीदा मंजू को जानकारी मुहैया कराई कि खासतौर

पर काले लोगों, विदेश से आकर ब्रिटेन में बसने वाले समाजों में महिलाओं के खिलाफ हिंसा के ज़्यादा मामले सामने आते हैं। इनमें दक्षिण एशिया, अरब धर्म और पूर्वी यूरोपीय देशों से आने वाले परिवारों में औरतों को अक्सर घर में ही जान से मार देने के मामले भी सामने आते हैं, जबकि बहुत सी महिलाएं खुदकुशी कर लेती हैं। हालांकि इस तथ्य पर तसल्ली जताई गई है कि महिलाओं के मानवाधिकारों और सम्मान का हिफाजत को दिशा में ठोस प्रगति भी हुई है। ब्रिटेन में महिलाओं को घरेलू हिंसा से बचाने के लिए एक नई परियोजना शुरू की गई है। इसमें व्यवस्था है कि किसी महिला के खिलाफ हिंसा या बुरे बर्ताव का दोषी पाए जाने वाले व्यक्ति को उसके घर से 28 दिनों तक अलग रखा जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र रेडियो में महबूब खान

मेल बॉक्स

ताकि घरेहर सुरक्षित रहे

झारखंड के हजारीबाग शहर का मीठा तालाब, जो अपनी प्राचीनता व मीठे जल के लिए प्रसिद्ध रहा है, काफी समय से अपनी बदहाली पर रो रहा है। इस तालाब से सटे कई देवी-देवताओं के मंदिर हैं, फिर भी उसके आसपास तरह-तरह की गंदगी बिखरी रहती है। तालाब में किनारे पर भारी मात्रा में पॉलिथीन की थैलियां तैरती नजर आती हैं। यही नहीं, लोग इसमें रोजाना गंदे कपड़े धोते हैं। इसके चारों ओर की सड़कें टूटी-फूटी हुई हैं। जगह-जगह आवारा और बीमार कुत्तों के झुंड भौंकते-हाड़ते नजर आते हैं। अभी हाल ही में इन कुत्तों ने भेड़ों के झुंड से एक भेड़ को अपना शिकार बना डाला। गौरतलब यह है कि यह स्थान दशकों से नगरवासियों के लिए

सुबह की सैर के लिए मुफ़ीद रहा है।

लेकिन अब सड़ांध और खतरनाक कुत्तों के कारण लोगों की सुबह की सैर भी प्रभावित होने लगी है। इसमें

कोई दोराय नहीं कि इस स्थान को स्वच्छ रखने के लिए नागरिकों को भी

अपनी ज़िम्मेदारी निभानी होगी, परंतु

स्थानीय प्रशासन से आग्रह है कि वह

उचित कदम उठाकर इस धरोहर को सुरक्षित रखने के प्रयास करे।

उर्मिला शर्मा

हजारीबाग, झारखंड

कब बदलेगी मानसिकता

मेरठ में प्याऊ को लेकर हुई दो गुटों

की झड़प ने सांप्रदायिक रूप ले लिया

और पूरे शहर को अशांत कर दिया।

बड़े आश्चर्य की बात है कि आजादी

के इतने वर्षों के बाद भी हम

सांप्रदायिक उन्माद पर काबू पाना नहीं

समझ यह कहती है कि मतदान प्रतिशत का अधिक होना

सत्ता विरोधी लहर का संकेत है, जबकि मतदान प्रतिशत

व चुनावी नतीजे के आंकड़े यह संकेत देते हैं कि कई बार

ज़्यादा मतदान प्रतिशत सत्ता के पक्ष में भी रहा है। इसके

चलते सरकारों दोबारा चुनकर आई हैं और कई बार इसके

विपरीत परिणाम भी दिखे हैं।

इस बार के आम चुनाव में भी मतदान प्रतिशत काफी

अधिक रहा है, जिसके कई अर्थ निकाले जा रहे हैं।

लेकिन किसी को भी इस नतीजे पर नहीं पहुंचना चाहिए

कि यह पूरी तरह से सत्ता-विरोधी लहर का परिणाम है।

वैसे सर्वेक्षण यह संकेत देते हैं कि कांग्रेस नेतृत्व वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार हार सकती है और भारतीय जनता पार्टी की अगुवाई में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की वापसी हो सकती है। लेकिन यह सिर्फ मतदान प्रतिशत के बढ़ जाने का नतीजा नहीं हो सकता। बदलाव का कारण काफी हद तक यह हो सकता है, क्योंकि जनता महंगाई, भ्रष्टाचार और विकास की कमी से दुखी है।

यह जरूरी नहीं कि ज़्यादा मतदान प्रतिशत सरकार में बदलाव लेकर ही आए। साल 1977 और 1980 के लोकसभा चुनावों के मतदान में करीब चार फीसदी की गिरावट दर्ज की गई थी और उन दोनों ही चुनाव में सरकार बदल गई। इसी तरह, 1989 और 1991 लोकसभा चुनाव के बीच मतदान में करीब छह प्रतिशत की कमी आई थी। लेकिन 1991 में चंद्रशेखर की अगुवाई वाली जनता दल सरकार की करारी हार हुई थी। आगे देखें, तो 1999 और 2004 लोकसभा चुनाव के बीच मतदान में दो प्रतिशत का अंतर

रहा, लेकिन अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली

एनडीए सरकार सत्ता से बाहर हो गई थी।

ऐसे भी उदाहरण हैं, जब मतदान प्रतिशत में बढ़ोतरी

हुई, लेकिन लगातार चुनावों में वही सरकार जीतकर आई।

जैसे 1962, 1967 और 1984 के लोकसभा चुनावों

में पूर्ववर्ती आम चुनावों की तुलना में अधिक मतदान हुआ,

लेकिन सत्ता में बदलाव नहीं आया। बीते पांच वर्षों के दौरान

कई राज्यों के विधानसभा चुनावों में भी यही दिखा है।

2008 और 2013 के बीच पूरे देश में 30 विधानसभा

चुनाव हुए, जिनमें से 24 विधानसभा चुनावों में मतदान

प्रतिशत बढ़ा और छह में यह घटा। इन 24 विधानसभा

चुनावों में से 12 में सरकारें बदलीं और बाकी 12 में स्थिति

यथावत रही, यानी सत्तारूढ़ पार्टी फिर से जीतकर आई।

वहीं उन छह विधानसभा चुनावों में, जहां पूर्ववर्ती चुनाव

के मुकाबले कम मतदान हुआ था, पांच सरकारें फिर से

जीतीं और सिर्फ एक को हार का सामना करना पड़ा था।

वैसे यह कहानी पिछले पांच वर्षों की नहीं है, बल्कि

1989 से 2008 के बीच भी रुझान कमोबेश ऐसे ही रहे।

गौरतलब है कि इस दौरान अलग-अलग राज्यों में 110

विधानसभा चुनाव हुए। इन 110 विधानसभा चुनावों में

42 में मतदान प्रतिशत बढ़ा, 31 चुनावों में घटा और बाकी

37 के मतदान प्रतिशत में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया।

जिन 42 विधानसभा चुनावों में मतदान प्रतिशत बढ़ा, उनमें

से 28 चुनावों के बाद सरकारें बदल गईं। वहीं दूसरी तरफ,

जिन 31 विधानसभा चुनावों में मतदान प्रतिशत घटा था,

उनमें से 18 चुनावों के नतीजों से सत्ता बदली और 13

के नतीजे पुरानी सरकार के पक्ष में रहे। इस आधार पर हम

कह सकते हैं कि ज़्यादा मतदान प्रतिशत इस बात के शायद

असली दिक्कत यहीं है कि सिर्फ दूसरों के किस्से बताने को कोई

काम-धंधा कैसे मान ले?

मौसी- अरे वाह, तू दूसरों की बुराइयां बताने

आया था कि अपना रिश्ता पेश करने आया था ?

किसी एक ठिकाने पर ढंग से कुछ कर-करा ले,

वे क्या कि जगह-जगह घूम-घूमकर दूसरों की

बुराइयां बताता फिरे है और खुद एक भी काम न

करके दिखाए।

अमिताभ- क्या करूं, मेरी आदत ही ऐसी है।

खैर, बसंती की मौसी की असली दिक्कत

यही है कि सिर्फ दूसरों के किस्से बताने को वह

कोई काम-धंधा कैसे मान ले ? हाव, बसंती की

शादी कैसे होगी, हेल्य।

आलोक पुराणिक

मनसा वाचा कर्मणा

चलना ही होगा

गति ही जीवन है। जहां गति नहीं है और जहां गति धर्म खो गया है, वहां जीवन भी नहीं है और अस्तित्व भी नहीं है। इस विश्व में कोई भी स्थिर नहीं है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूम रही है। सूर्य भी समग्र सौरमंडल को लेकर आगे बढ़ रहा है। चलना ही पड़ता है, चलना ही होगा, चलना ही धर्म है। जो जड़ हैं, जो स्थिर हैं, जो परिवर्तन पसंद नहीं करते, वे इस गतिशीलता के विरुद्ध चलते हैं। गतिशीलता के विरुद्ध कोई ठीक नहीं रह सकता, कोई बच नहीं सकता, क्योंकि गतिशीलता के विरोध का अर्थ है मृत्यु का वरण करना अर्थात् मृत्यु को बुलाना। अतः चलना ही होगा।

हमने अतीत में, इतिहास में देखा है, और भविष्य में भी देखेंगे कि इस

चलने का धर्म जो बंधा जाते हैं, वे युग की दृष्टि से त्यक्त हो जाते हैं। वे ही

दूसरे के चलने में बाधा खड़ी करते हैं, क्योंकि उनमें स्वयं चलने की शक्ति

नहीं है। जिनमें चलने की शक्ति नहीं है, उनका आचरण क्षय है, पर चलने

की इच्छा ही जिनमें नहीं है, उनका आचरण क्षय नहीं है। क्योंकि वे स्वयं तो

नहीं ही चलते, दूसरों के चलने के पथ में भी बाधा पैदा करते हैं- वे ऐसे जान-बूझकर करते हों या फिर अनजाने में।

विशेष काल में, विशेष परिस्थिति में, विशेष सामाजिक-आर्थिक-नैतिक

और अन्याय जरूरतों में इस चलने की गति में तेजी लानी होगी। गति को

बढ़ाते जाना होगा, गति सब समय एक-सी नहीं रहती। इस पृथ्वी पर कोई दो

वस्तुएं एक जैसी नहीं हैं। इसलिए गति कम होगी या बढ़ेगी। जब गति कम हो

जाती है, तब समाज दलदल में जा फंस्ता है। उस समय जीवन, मृत्यु के

सामने आ जाता है। जिन्हें कोई काम नहीं, जो केवल खाते और सोते हैं, उसी

तरह दिन-पर-दिन बिता देते हैं, उनके जीवन में विरक्ति आ जाती है और वे

यह भी कह उठते हैं- अब यह एकरसता अच्छी नहीं लगती, यानी जीवन भी

परिवर्तन चाहता है।

श्री आनन्दमूर्ति

सीख पाए हैं। इसके कारण रह-रहकर देश के कई हिस्सों में तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है, जो हमारे इतिहास को तो दामगदर बनाती ही है, वर्तमान को भी विचलित कर देती है और भविष्य को संशंकित बनाती है। हमारे सदर्भाव को कलंकित होने से बचाने के लिए ऐसी घटनाओं को रोकने पर गंभीरता से विचार करना होगा तथा दंगा करने व उसे हवा देने वालों से सख्ती से निपटना होगा। सरकार और समाज प्रयास करें, तो कुछ भी असंभव नहीं। बस मिल-जुलकर सांप्रदायिक सौहार्द की दिशा में कदम उठाने की जरूरत है।
शकुन्तला मेहनत नाेवा , इंदौर

शिक्षकों की कमी

सरकारी स्कूलों में शिक्षकों की कमी

से जुड़े तथ्य नए नहीं हैं। बार-बार इस

हिन्दुस्तान

• नई दिल्ली • बुधवार • 14 मई 2014 •

ही बड़ा सबूत हैं कि सरकार में बदलाव हुआ और कम मतदान प्रतिशत ने यथास्थिति को बनाए रखा।

इसमें कोई दोराय नहीं कि इस बार सभी नी चरणों में मतदाताओं की भागीदारी काफी अधिक दिखी, लेकिन

किसी को इसका यह मतलब नहीं निकालना चाहिए कि मतदाता अधिक से अधिक संख्या में पोलिंग बूथ तक

इसलिए पहुंचे, क्योंकि वे मौजूदा सरकार से नाराज थे।

कुछ सकारात्मक कारण भी रहे हैं, जिनसे जनता प्रोत्साहित

हुई और पिछले चुनावों की तुलना में अधिक संख्या में भागीदार बनी। मतदाताओं को जागरूक बनाने के लिए निर्वाचन आयोग ने भी अपनी तरफ से कई प्रयास किए।

इससे भी उन राज्यों और संसदीय क्षेत्रों में लोगों पर अच्छा-खासा प्रभाव पड़ा, जहां पहले कम मतदान होता था।

बहरहाल, सभी चरणों के मतदान का सिलसिलेवा

और सतर्क विश्लेषण करें, तो यह भी साफ हो जाता कि उन राज्यों में मतदान प्रतिशत घटा है या समान रहा है,

जहां पहले अधिक मतदान हुआ था। गौरतलब है कि नगालैंड, सिक्किम, त्रिपुरा, लक्षद्वीप और पुडुचेरी जैसे

राज्यों व केंद्र शासित प्रदेशों में साल 2009 के आम चुनावों में 80 प्रतिशत से अधिक मतदान हुआ था। इस

बार के आम चुनाव में इनमें से कई में थोड़ी कमी दर्ज की गई है। इसी तरह, केरल, मणिपुर, पंजाब और तमिलनाडु

जैसे राज्यों में 2009 के आम चुनावों में 70 से 80 प्रतिशत मतदान दर्ज किया गया था, इस बार यह समान ही रहा या

इसमें मामूली बढ़ोतरी देखी गई।

ऐसे में, बड़ी और उत्साहित करने वाली खबर यह रही कि मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, झारखंड, छत्तीसगढ़, गुजरात,

राजस्थान, बिहार और उत्तर प्रदेश में मतदाताओं ने भारी संख्या में भागीदारी की। इन राज्यों में लगभग 10 से 20 प्रतिशत के बीच अधिक मतदान हुआ है। लेकिन इसका

कोई भी अर्थ निकालने से पहले किसी के भी जेहन में यह बात जरूर होनी चाहिए कि पहले इन राज्यों में कम मतदान होता था, कभी 50 प्रतिश